शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 17
Issue 1&2
15, Jan- July, 2026

भारतीय ज्ञान परंपरा में शोध

बीज शब्द :

शोध, भारतीय ज्ञान परंपरा, भारतीय कालगणना, अखण्डतावादी दृष्टि,
तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा

प्राचीन भारत में आयुर्वेद, गणित, ज्योतिष, नक्षत्र एवं खगोल विज्ञान, दर्शन आदि का पूर्ण विकास रहा है। औपनिवेशिक कालखण्ड में भारतीय ज्ञान परंपरा की धारा कई कारणों से क्षीण हो गयी और यह मान लिया गया कि भारत में शोध की अपनी परंपरा नहीं रही है। प्रस्तुत शोध प्राकल्पना में भारतीय शोध प्रणाली की विशिष्टताओं को रेखांकित करने का प्रयत्न है।

*****

प्रो० योगेन्द्र प्रताप सिंह
निदेशक
गोविन्द वल्लभ पंत सामाजिक संस्थान
प्रयागराज

भारतीय ज्ञान परंपरा में शोध

यह आम धारणा है कि भारत की कोई शोध प्रणाली नहीं रही है। भारत ने अभूतपूर्व दृष्टि से बहुत पहले ज्ञान मीमांसा और तत्वमीमांसा को स्थापित कर लिया था। ज्ञान मीमांसा में ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान की त्रिपुटी पर गहन विचार कर लिया था। तत्वमीमांसा में पदार्थों का गहन चिंतन किया था। भारत की ज्ञानपरंपरा में जड़ और चेतन का भेद नहीं है। भारतीय ज्ञान परंपरा ने जड़ और चेतन के पारस्परिक संबध ों पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया है, उसके पारस्परिक संबंध ों को देखा है। इसलिए भारत ने भौतिक जड़वाद की सीमा से ऊपर उठकर सूक्ष्म चेतन को पदार्थ माना है। सांख्य दर्शन का निदर्शन इस दृष्टि पर विशेष प्रकाश डालता है।

भारत की काल गणना और खगोल विज्ञान का अस्तित्व इस बात का स्वत: प्रमाण है कि भारत में आधुनिक विज्ञान की तरह स्थापित ज्ञान और शोध की प्रणाली थी। और यह कहें कि आधुनिक शोध प्रणाली से कहीं अधिक उन्नत शोध प्रविधि विकसित थी। इस पद्धति में भारतीय शोध पद्धति ने देश काल की सीमा से परे जाकर नक्षत्रों आदि का ज्ञान प्राप्त किया था। वर्तमान भौतिक ज्ञान की शोध प्रणाली अपने को आदर्श मानती है। फिर भी अपने पूर्व स्थापित सिद्धान्तों मान्यताओं को असत्य साबित करती है। किसी समय द्रव्यमान संरक्षण का नियम दिया, ऊर्जा संरक्षण का नियम दिया, फिर द्रव्यमान से ऊर्जा में परिवर्तन का सिद्धान्त विकसित किया। पदार्थ में परमाणु की बात की, मूलकणों की और क्रमश: उसकी व्यवस्था के संबंध में नील्स बोर की बोर-बरी स्कीम दिया, श्रोडिंजर वेब की कल्पना, हाइजनवर्ग ने अस्थिरता का सिद्धान्त दिया और धीरे-धीरे न्यूटोनियन फिजिक्स से आगे बढ़ते-बढ़ते उन सिद्धान्तों की सीमाओं को अतिक्रमित करते हुए अब क्वांटम मैकेनिकस की बात कर रहे हैं। निष्कर्ष यह कि पश्चिम की शोध पद्धति अभी विकासशील है। अभी वह अपनी सीमा तय करती है फिर ज्ञान की उस सीमा आगे बढ़ने पर अपने ज्ञान सिद्धान्तों को पुर्नपरिभाषित कर आगे बढ़ती है। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि भारतीय शोध प्रणाली जहाँ पहुँची थी, वहाँ तक आधुनिक विज्ञान के शोध की गति नहीं है।

भौतिकवादी जड़ चिंतन की सीमा वर्तमान पश्चिमी शोध प्रणाली की सीमा है। भारतीय शोध प्रणाली ने चेतन और जड़ की सीमा से परे जाकर दोनों की पारस्परिकता का अवलोकन किया था। इसलिए भारतीय शोध प्रणाली इसके पार जाकर दृष्टि निक्षेप करती है। पश्चिमी शोध प्रणाली की वस्तुनिष्ठता (Objectivity) जड़-जगत तक सीमित है। भारतीय शोध प्रणाली जड़ से आगे जाकर चेतन का वस्तुनिष्ठता से अवलोकन करती है। वर्तमान की पश्चिमी शोध पद्धति जिस 'वस्तुनिष्ठता' और 'प्रयोग' को अपना आदर्श मानती हैं, वही उसकी सीमा है। क्वांटम फिजिक्स अब स्वयं इस वस्तुनिष्ठता को चुनौती दे रहा है। रही बात प्रयोग की तो स्वयं प्रयोगों के प्रेक्षण ने यह सिद्ध करना प्रारंभ कर दिया है कि सभी प्रयोग सार्वभौमिक दृष्टि से एक जैसे परिणाम नहीं देते। जीवविज्ञान में यह भली-भांति देखा जा सकता है। जीवधारियों की शल्यक्रिया कर उनके भौतिक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु उनके चेतन अस्तित्व और व्यवहार के बारे में अनुमान के आलावा कोई गति नहीं है। जैसे ही शल्यक्रिया की जाती है, चेतन तो उससे अलग हो जाता है। फिर हमारा पर्यवेक्षण केवल जड़ का है, जड़ तक सीमित है। यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि खण्ड से अखण्ड (Holistic) ज्ञान का बोध कैसे हो सकता है। आधुनिक शोध प्रणाली में जिस 'वस्तुनिष्ठता' को ज्ञान का आदर्श माना गया, वर्तमान का आधुनिक भौतिक विज्ञान उसे सीमित मानने के लिए विवश है। फोटोन के डबल स्लिट प्रयोग ने एक प्रारंभिक स्थापना दे दी कि जैसे-जैसे सूक्ष्म पर्यवेक्षण की ओर बढ़ेगे जड़ पदार्थ का व्यवहार वस्तुनिष्ठ की बजाय विषयनिष्ठ हो जाता है। आधुनिक शोध प्रणाली की सीमा का निदर्शन कराने वाला यह एक स्फुलिंग मात्र है। आधुनिक पश्चिमी शोध प्रणाली को अभी और आगे जाना है। अभी तो मात्र 'गॉड पार्टिकल' की खोज के साथ अपनी सीमा का अवलोकन मात्र है। यहाँ भी जड़ की सीमा में रहने की विवशता है। क्योंकि वर्तमान की शोध प्रणाली अपनी सीमित प्रयोग और प्रेक्षण की हद से बाहर नहीं जा सकी है।

भारतीय शोध प्रणाली आधुनिक विज्ञान की शोधा प्रणाली निश्चित रूप से पूर्णत: वैज्ञानिक है, और अभी विकसनशील प्राचीन भारतीय शोध प्रणाली इसके आगे जाकर अत्यंत विकसित अवस्था में है। भारतीय शोध प्रणाली अखण्डतावादी (Holistic) है। वह 'विशिष्टता' को भी अखण्डता के साथ रखकर सम्यक दृष्टि से देखती है। आधुनिक शोध प्रणाली कही बार बाइनरी से ऊपर उठ नहीं

पाती, इसलिए वहाँ प्राय: सामान्य ज्ञान और विशिष्ट ज्ञान परस्पर विरोधी दिखाई देते हैं। उनमें किसी भी प्रकार का सामंजस्य नहीं दिखाई देता। जैसे-जैसे आधुनिक विज्ञान सूक्ष्मता की ओर बढ़ता है, एंकांगी होने लगती ही। सामान्यज्ञ और विशेषज्ञ के बीच एक बड़ा अन्तराल खड़ा हो जाता है। चिकित्सा विज्ञान से इसे ठीक-ठीक समझ सकते हैं। एक आयुर्विज्ञानी विशेषज्ञ नहीं होता, जड़-चेतन का भेद नहीं करता, उसे जितना रोगी की प्रकृति का ज्ञान होता है, उतना ही औषधि चाहे रसायन हो अथवा जड़ी बूटी हो, उसकी प्रकृति का ज्ञान होता हैं, वह शमन की बजाय उसकी प्रकृति का और उसके संतुलन का ध्यान रखता है। संतुलन के विपरीत जाना प्रकृति के विपरीत जाना है। आयुर्विज्ञानी की दृष्टि में यह असन्तुलन ही रोग है और सन्तुलन ही साधना है। इसके द्रव्यगुण विज्ञान में जड़ और चेतन दोनों के अस्तित्व पर गहन विचार किया गया है। वह औषधियों के निर्माण ókrk यथा जड़ी बूटियों और रसायन से मान उपयोगी तत्त्वों का एकांगी निष्कर्षण नहीं करता, बल्कि उसके अन्य सहयोगी तत्त्वों को भी औषधि में साथ रखता है। जिससे उस प्रमुख तत्व की प्रकृति न बदले। उसका शोधन करता है, उसको गुणों को सघन करते हुए बहुगुणित करता है।

आधुनिक शोध प्रणाली वनस्पति या रसायनिक मिश्रण से सक्रिय और उपयोगी तत्व/रसायन का निष्कर्षण करती है, उसे अलग कर देती है, फिर वह खराब या विपरित न हो उससे अतिरिक्त रसायन और एक्सेपिएंट डालती है जो अपनी उपस्थिति में अलग प्रभाव उत्पन्न करते हैं। यही कारण है कि एलोपैथ की कोई भी दवा दुष्प्रभावरहित नहीं है। ऐसी दवाएँ उन लक्षणों का शमन करती हैं। उन लक्षणों का शमन करती हैं जिन लक्षण ों के शमन के लिए उन्हें खोजा गया था। इन दवाओं के निरंतर प्रयोग से उनके प्रति क्रमश: प्रतिरोध की क्षमता विकसित होती जाती है और उनका प्रभाव धीरे-धीरे कम होने लगता है।

आधुनिक शोध प्रणाली विशेषज्ञता केन्द्रित है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली एक विषय का विशेषज्ञ दूसरे विषय से अपने का पूरा अनभिज्ञ पाता है। फलत: रोगी को इन विशेषज्ञों के बीच प्राय: भटकना पड़ता है।

भारतीय शोध की यह अखण्डता की दृष्टि ज्ञान के समस्त अनुशासनों में है। भारतीय शोध दृष्टि ज्ञान को शाखाओं में बाँटकर नहीं देखती। समग्रता में चिंतन करती है। इसलिए भारतीय शोध प्रणाली में यह अखण्डतावादी दृष्टि सर्वत्र मिलती है। भारतीय शोध दृष्टि में विज्ञान और कला अलग-अलग नहीं है। पाश्चात्य चिंतन इसको अलग कर के देखता है। इसलिए वर्तमान शैक्षिक अनुशासन का प्रथम अध्याय इसी विमर्श से प्रारंभ होता है कि राजनीति कला है या विज्ञान, समाज अधययन कला है या विज्ञान। भारतीय ज्ञान दृष्टि समेकित रूप से इसे एक मानकर चलती है। प्रत्येक ज्ञान दर्शन के धरातल पर अवस्थित होना चाहता है। इसलिए प्रत्येक विषय दर्शन की ऊँचाई पर पहुँचना चाहता है और उसके बाद लोक में उसके प्रसार के लिए उसे कथाओं में अनुस्युत होना होता है। यही कारण है कि भारत का अधिकांश ज्ञान कथाओं में है। भारतीय ज्ञान 'सत्यम-शिवम-सुन्दरम' का ज्ञान है। यहाँ तथ्य, सृजन और लोककल्याण का समन्वय है। तीनों की एक साथ स्थिति है। प्रकृति में क्या सौन्दर्य नहीं है, क्या विज्ञान नहीं है या वह लोक कल्याणकारी नहीं है? इसमें किसी एक पर निर्भरता और अन्य को छोड़ना अधूरे ज्ञान की ओर अग्रसर होना है। ज्ञान की इस संश्लिष्ट प्रक्रिया का अनुसरण भारत की शोध प्रणाली करती है। इन्हें खण्डित करते ही ज्ञान और विज्ञान अधूरे होने लगते है। पदार्थ का व्यवहार भी बदल जाता है। इससे ज्ञान का दुरुपयोग कम होने की सम्भावना रहती है। इसलिए अखण्डतावादी समग्र दृष्टि ही ज्ञान संधान की उपयुक्त सीढ़ी है। इस ज्ञान का दुरुपयोग कम होने की संभावना रहती है।

शोध की प्रक्रिया में प्रेक्षण और प्रयोग की महिमा से हम सभी परिचित है। आधुनिक विज्ञान प्रयोग केन्द्रित है। प्रयोग प्राय: साधन आश्रित होता है। साधन आश्रित प्रेक्षण खण्डित प्रेक्षण है। यह एक विशिष्ट घटना का सामान्य प्रदर्शन है। इस प्रकार के प्रयोग को हम सभी देख सकते हैं। शिक्षा में इसका विशेष महत्त्व है। यह हेय या निरर्थक है, ऐसा भी नहीं है। यह कहना अधिक उपयुक्त है कि भारतीय शोध प्रणाली 'प्रयोग' से अधिक 'प्रेक्षण' केन्द्रित है। प्रकृति के सन्निकट रहने वाले प्रकृति के समस्त घटकों के व्यवहार और उसकी प्रकृति से धीरे-धीरे परिचित हो जाते है। निरंतर सामुहिक प्रेक्षण एक शोध की प्रक्रिया का हिस्सा हो जाता है। प्रकृति सदैव भिन्न-भिन्न घटनाओं के माध्यम से अपने अंर्तजगत को उद्घाटित करती रहती है। उसको प्रेक्षण स्वत: ज्ञान का शोधन है। इसके लिए सतत् प्रेक्षण की आवश्यकता होती है। सतत् प्रेक्षण और उसका अनुभव में पर्यावसान एक प्रकार से आधुनिक शब्दावली में मेटा डेटा एलोगोरदम से निष्कर्ष तक की यात्रा है। इसे भारतीय शोध प्रणाली 'साधना' के रूप में देखती है। यह प्रेक्षण चित्त की शांत अवस्था में ही अच्छे ढ़ंग से फलीभूत होती है। यही कारण है कि जिज्ञासु शांतस्थल की तलाश में रहते है। साधकों का प्रियस्थल कन्दराएँ है। कोलाहल से दूर एकांतिक स्थल हैं।